बेहतर कदम ◆ इंडियन प्रोटेक्शन इंडेक्स से नीतियां तय करने में आम आदमी की भूमिका पर बहस को अहमियत

आईपीआई : बेहतरी और सुरक्षा का सूचकांक

राजेश शुक्ला

लेखक एनसीए ईआर में मैक्रो कंज्यूमर रिसर्च के डायरेक्टर हैं। आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया में आम आदमी के हितों की सुरक्षा के सवाल पर उनका लेख।

जून, 1991 में भारत में आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया शुरू हो गई थी। अब तक संरक्षण में रह रहे मैन्यूफैक्चरर्स, नियमन के घेरे में रहने वाले वित्तीय बाजार और सबसे ज्यादा अनुभवहीन आर्थिक खिलाड़ी अब एक नई दुनिया के सामने थे। उस दौर में कहा गया था कि अर्थव्यवस्था के केंद्र में लोग ही होंगे।यह सिर्फ बड़ी फैक्ट्रियों और निर्यातकों के बारे में ही नहीं सोचेगी। हालांकि यह सच है कि एक के बाद एक सरकारों ने आर्थिक सुधार की प्रक्रियाओं को जारी रखा लेकिन भारतीय लोकतंत्र के विशाल दायरे में आर्थिक समानता और सामाजिक न्याय के तत्वों को छोड़ा नहीं गया। उदारीकरण की आंधी में आम आदमी की उपलब्धियां जानने की कोशिश भारत में सांख्यिकी अनुसंधान एक अहम क्षेत्र बन गया। दरअसल भारत में जब आर्थिक उदारीकरण की शुरुआत हुई ठीक उसी समय लोगों के हालात जानने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कोशिशें शुरू हो गई थीं। इसके लिए पाकिस्तानी अर्थ शास्त्री स्वर्गीय महबूब उल हक का धन्यवाद करना चाहिए।उनकी कोशिश की बदौलत ही संयुक्त राष्ट्र ने मानव सूचकांक से जुड़े आंकड़े जारी करने की पहल की। यह सूचकांक औसत उम्र, शिक्षा और जीडीपी से जुड़े आंक डोंट से बना था। राष्ट्रीय स्तर पर ये आंकड़े एक ऐसे तौर-तरीके के आधार पर जुटाए गए थे, जिसे ठोस रूप देने में डॉ. हक की प्रेरणा काम आई।उनकी पहल की वजह से डॉ. स्ट्रीट, डॉ. फ्रांसिस स्टीवर्ट, डॉ. गुस्तावो रे निस, डॉ. किथे ग्रिप, डॉ. सुधीर आनंद, डॉ. मेघनाद देसाई और डॉ. अमर्त्य सेन ने इसमें अहम योगदान दिया था। डॉ. सेन ने ही इस अवधारणा का ढांचा तैयार किया था। उन दिनों योजनाकारों के हलकों में माहौल बड़ा सरगर्म था और था और इस बात पर बहस होती थी कि बाजार अर्थव्यवस्था से भारत के गरीबों को बचाने के लिए एक सुरक्षा जाल सुनिश्चित किया जाना चाहिए। इस लिहाज से संयुक्त राष्ट्र की ओर से हर साल प्रकाशित किए जाने वाली मानव विकास रिपोर्ट की अहमियत बढ़ती गई और इसने भारत में राज्य सरकारों को अपना मानव विकास रिपोर्ट लाने के लिए प्रेरित किया।कुछ राज्यों में तो जिला स्तर पर भी मानव विकास रिपोर्टें तैयार हुईं। लेकिन धीरे-धीरे इन रिपोर्टों को निर्धारित समय पर प्रकाशित न कर पाने की वजह से उत्साह धीमा पड़ गया। पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों ने तो इस कवायद को तिलांजलि ही दे दी।अब तक इसकी एक मानव विकास रिपोर्ट सिर्फ2004 में आई है।

वक्त के साथ सुरक्षा जाल की यह अवधारणा समावेशी विकास की बहस में तब्दील हो गई। हालांकि आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया से लाभान्वित होने वाले और वंचितों के बीच अंतर पर बहस नहीं के बराबर है।दरअसल इस कड़वी सच्चाई का पता मीडिया के हस्तक्षेप से चलता है और इससे यह जानने की इच्छा होती है कि सरकार वंचितों को बचाने के लिए कौन से उपाय कर रही है। बहरहाल इंडियन प्रोटेक्शन इंडेक्स (आईपी आई) के उदभवन से आम आदमी एक बार फिर केंद्र में है। यह भारतीय नागरिकों की आर्थिक-सामाजिक बेहतरी का एक नया दर्पण बन चुका है और पिछले दो दशक से चले आर हे पैमानों से आगे जाता है। आईपी आई बुजुर्गों, बीमारों और त्रासदियों के शिकार की सुध लेने में भारत की काबिलियत को बताता है। विकसित देशों में अगर नागरिक दुर्घटना या बीमारी का शिकार होकर कमाने लायक नहीं रहता तो वह राज्य की सुरक्षा का हकदार हो जाता है। बुजुर्ग होने या अनाथ होने की वजह से कोई व्यक्ति वंचना का शिकार नहीं होता है। लेकिन भारत के एक नए आर्थिक ताकत बन कर उभरने के शोर के बीच सच्चाई यही है कि सेवानिवृत लाभ, पेंशन, बेरोजगारी भत्ता, रु गण और विकलांग लोगों को आर्थिक लाभ देने के मद में दे शकी जीडीपी का एक फीसदी से भी कम खर्च होता है।

संजय डिमरी

बहरहाल सुरक्षा एक बड़ा और विवादास्पद क्षेत्र है।आपको 1990 के दशक में उठे ग्रॉस नेशनल हैप्पीनेस यानि जी एनएच जैसी भूटानी अवधारणा के बारे में पता होगा जिससे जीवन की गुणवत्ता और सामाजिक तरक्की मापने का प्रस्ताव किया गया था। इसमें सिर्फ जीडीपी आंकने की बजाय जिंदगी की व्यापक मानसिक खुशी मापने पर जोर था। लेकिन यह भी सही है कि खुशी जैसी सुरक्षा जटिल, बहुआयामी और अस्थायी अवधारणा है।जबकि मुख्य रूप से भारतीय परिवारों में वित्तीय और सामाजिक सुरक्षा की स्थिति और प्रक्रिया के आक नल से जुड़ी विधि समाहित है। आईपी आई 78 सूचकांकों से बना है।इनमें प्रासंगिकता, विश्लेषणात्मक तत्वों और आंकड़ों की उपलब्धता का ध्यान रखा जाता है। यह इस अर्थ में खास है कि इसमें कई मनोवैज्ञानिक कसौटियों को शामिल किया गया है।बहुआयामी अवधारकों का ध्यान में रख कर ही इसे विकसित किया गया है। फिलहाल भारत की 1.1 अरब की आबादी 20.5 करोड़ परिवारों में रहती है। वित्तीय आंकड़ों के नजरिये से देखें तो इनमें से सिर्फ दो फीसदी परिवार यानि पांच लाख को ही अच्छी तरह सुरक्षा मिली हुई।लगभग 16 फीसदी को मिली सुरक्षा का स्तर ठीक-ठाक है। इसमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि अच्छी तरह सुरक्षित परिवारों में से काफी बड़ा हिस्सा ग्रामीण इलाकों में है। शहरी इलाकों में दस लाख परिवारों की तुलना में ग्रामीण इलाकों का 40 लाख परिवार अच्छी तरह सुरक्षित है। अच्छी तरह से सुरक्षित परिवारों की आय औसत वार्षिक आय का दोगुना है। इस तरह ठीक तरह से सुरक्षित परिवारों की आय औसत वार्षिक आय का 1.7 गुना है। व्यय के पैटर्न में भी यही ट्रेंड देखने को मिलता है।

आपका कैरियर

बिजनेस भास्कर पाठशाला